जैन धर्म ग्रन्थों मे उल्लेखित 'आचार्य अमृतचन्द्र' (विशेषकर प्रारम्भिक जीवन कुल एवं संधों से सम्बन्धित)

*डॉ. अंशुल शर्मा

सांराश

पूर्व मध्यकाल में संस्कृत व प्राकृत भाषाओं में रचित सम्पूर्ण जैन साहित्य की तरह जैन दर्शन के ग्रंथ भारतीय इतिहास के उन धुधले पृष्ठो को प्रकाशित करते हैं, जिनके विषय में इतिहासकारो का ज्ञान बहुत कम, आचार्य अमृतचन्द्र ने अपने ग्रन्थों के माध्यम से जैन धर्म के विभिन्न आयामों को बतलाने का प्रयास किया, उन्होंने अंहिसा को परम धर्म मानकर हिंसा सिद्वान्त का विरोध किया जो कि हमारी संसकृति का सदा ही प्रयास रहा है। जैन धर्म ग्रन्थो में ऐतिहासिक दृष्टि से उनके दर्शन के अध्ययन के लिए उनका समय और स्थितिकाल के बारे में हमे विस्तृत वर्णन मिलता है। जिसमें उनके प्रारम्भिक जीवन, कुल एवम् संधों के बारे में जानकारी मिलती है।

आचार्य अमृतचन्द्र जी 'अमृतचन्द्रसूरि' नाम से विख्यात थे। इस बात की पुष्टि उनकी टीकाओं तथा अन्य कृतियों से होती है। जैसे समयसार की आत्मख्याति,[1] प्रवचनसार की तत्त्वप्रदीपिका,[2] पंचास्तिकाय की समयव्याख्या नामक टीकाओं, लघुतत्त्वस्फोट आदि नामक कृतियों के अन्त में अमृतचन्द्र सूरि नाम का प्रयोग मिलता है।

परवर्ती लेखकों द्वारा नाम उल्लेख

बाद के लेखकों ने उन्हें अपना अग्रणी मानकर उनका नामोल्लेख किया है। साथ ही उनके पर्यायवाची नामों का भी प्रयोग किया है। जैसे आचार्य पद्मप्रभमलधारी देव ने तो नियमसार टीका में उनका पन्द्रह बार उल्लेख किया है। बारहवीं सदी के प्रसिद्ध विद्वान् पण्डित आशाधरजी ने आचार्य अमृतचन्द्र को 'ठक्कुरमृतचन्द्रसूरि' से सम्बोधित किया गया है।[3] उनके नाम में दो शब्दों के मेल मिलता है। ठाकुर और सूरि इससे यह बात भी प्रमाणित होती है कि आचार्य अमृतचन्द्र की ख्याति परवर्ती ग्रन्थकारों में अत्यधित सम्माननीय पद पर थी। साथ ही साथ इस बात का भी पता चलता है कि जिस शब्द से सम्बोधित किया है (ठक्कुर) व ठाकुर एकार्थवाची शब्द हैं, अतः प्रतीत होता है कि अमृतचन्द्राचार्य उच्च क्षत्रिय राजघराने से सम्बन्धित थे।

कई विद्वान् और आचार्य हुये हैं जिन्होंने आचार्य अमृतचन्द्र जी को अलग–अलग नामों से सम्बोधित किया है, जैसे सोलहवीं विक्रम सदी के आचार्य भट्टारक शुभचन्द्र ने अमृतचन्द्र के लिए 'सुधाचन्द्र मुनि' शब्द का प्रयोग करते हैं।[4] और दूसरे स्थल पर अमृतचन्द्र का 'अमृतविद्युयतीश' नाम का उल्लेख मिलता है। विक्रम अठारहवीं सदी के पण्डित वृंदावनदास जिन्होंने अमृतचन्द्र 1826 विं. सं.[5] तथा दौलतराम ने अमृतचन्द्र मुनीन्द्र नाम का प्रयोग किया है। श्री एच. डी. वेलंकर ने पीटर्सन रिपोर्ट में उन्हें 'अभयचन्देणसूरिहि' शब्द का प्रयोग किया है। मराठी टीकाकार नारायण जोगी ने अमृतचन्द्र को 'पीयूषचन्द्रसूरी लिखा है।

इस प्रकार विभिन्न उपनामों से प्रकृत आचार्य का नाम अमृतचन्द्र अभिव्यक्त होता है, जो सूरि विशेषण से विशेषतः विख्यात है। जैसाकि हमने देखा कि विभिन्न विद्वानों और आचार्यो ने अमृतचन्द्र को अलग–अलग नाम से सम्बोधित किया, जिसमें एक बात निकल कर आती है कि जो उन्होंने विभिन्न उपनामों का उल्लेख किया है, जैसे श्रीमद्, सूरि,, ठक्कुर, मुनि यतीशमुनीन्द्र, मुनिराज, आचार्यवर, देव आदि जो सभी शब्द अमृतचन्द्र के व्यक्तित्व के द्योतक हैं। इसमें

सुधा, अमी, अभयं तथा पीयूष ये सभी शब्द 'अमृत' पद के पर्यायवाची है तथा विधु इन्दु तथा चन्द्र ये 'चन्द्र' पद के वाचक होने से प्रकृत आचार्य का वास्तविक नाम 'अमृतचन्द्र ही प्रमाणित होता है।

अमृतचन्द्र का कुल

आचार्य अमृतचन्द्र का कृतित्व ही उनका वास्तविक परिचय है। तथा साथ ही इस संबंध में आचार्य अमृतचन्द्र के परवर्ती टीकाकारों तथा लेखकों के आधार पर भी प्रकाश डाला जा सकता है।[6]

ठाकुर कुल

तेरहवीं सदी के प्रसिद्ध विद्वान् पंडित आशाधरजी ने अपनी अनगार धर्मामृत की टीका में अमृतचन्द्र के कुल से सम्बन्ध में बताते हुए उन्हें बड़े गौरव से 'ठक्कुरअमृतचन्द्र सूरि' नाम से अभिहित किया है। ठक्कुर शब्द हिन्दी में ठाकुर पद का वाचन तथा सम्मानित कुल का द्योतक है। अतः प्रतीत होत है कि अमृतचन्द्र जो कुलीन घराने से सम्बन्धित सम्भवतः उच्च क्षत्रिय राजघराने से सम्बन्धित रहे होंगे।[7]

विभिन्न संघों से सम्बन्ध

द्रविड़ संघ से सम्बन्ध

ऐसा माना जाता है कि आचार्य अमृतचन्द्र शंकराचार्य के समकालीन थे। अमृतचन्द्र जी की आत्मख्याति टीका और शंकराचार्य का शारीरिक भाष्य बहुत कुछ समान है और शंकराचार्य आत्मख्याति टीका के विचारों से प्रभावित भी थे। साथ ही शंकराचार्य अपने को एक द्रविड़ आचार्य द्वारा प्रभावित कहते हैं इसलिए प्रोफेसर चक्रवर्ती ने आचार्य अमृतचन्द्र को द्रविड़ संघी अनुमानित किया है।[8] उक्त अनुमान का भी कोई आधार उपलब्ध न होने के कारण आचार्य अमृतचन्द्र को द्रविड़ संघी नहीं माना जा सकता।

पुन्नाटसंघ के साथ सम्बन्ध

जैन ज्योति : ऐतिहासिक व्यक्तिकोश में उल्लिखित पुन्नाट गुरूकुल के अमृतचन्द्र, जिनके शिष्य विजकीर्ति ने 1154 ई. में एक प्रतिमा प्रतिष्ठित की थी और जो मूर्ति सुल्तानपुर (पश्चिमी खानदेश महाराष्ट्र) से प्राप्त हुई ।[9] उक्त उल्लेख से अमृतचन्द्र की पुन्नाटसंघी होने की संभावना व्यक्त की जा रही है, परन्तु इसमें विरोधाभास है कि उक्त विजयकीर्ति के गुरू अमृतचन्द्र प्रकृत अमृतचन्द्र नहीं है, क्योंकि स्वयं उन्होंने अपने किसी शिष्य का उल्लेख नहीं किया है। साथ ही साथ पश्चाद्वर्ती लेखकों ने भी उक्त प्रकार का कहीं भी कथन नहीं दिया है। इसके अलावा उक्त लेख प्रकृत अमृतचन्द्र के बाद का प्रतीत होता है। अतः प्रकृत अमृतचन्द्राचार्य के पुन्नाटसंघी होने के कोई भी प्रमाण नहीं है।

काष्ठासंघ तथा अमृतचन्द्र

आचार्य विद्यासागर जी अमृतचन्द्रसूरि कृत समयसार कलश के आधार पर अमृतचन्द्र को काष्ठासंघी लिखा है। अपनी बात की पुष्टि के लिए उन्होंने अमृतचन्द्र के प्रवचनसार की चूलिका में 10–12 गाथाओं की टीका नहीं लिखी जबकि उनके परवर्ती जयसेनाचार्य ने टीका लिखी है। उक्त गाथाओं में स्त्रीमुक्ति निषेध का प्रसंग इष्ट नहीं था। दूसरे अमृतचन्द्र कृत टीका के अन्त में काष्ठासंघ का ज्ञान होता है। इसलिए जयसेन मूलसंघ के तथा अमृतचन्द्र काष्ठासंघ के सिद्ध होते है। परन्तु उक्त मान्यता को अधिकांश विद्वान् नकारते है। न तो इसकी पुष्टि काष्ठासंघ से होती है और न अमृतचन्द्र रचित ग्रन्थों और टीकाओं से। काष्ठासंघ की गुर्वावलि मे भी अमृतचन्द्र का कहीं नामोल्लेख नहीं है।[10] अधिकांश विद्वान यह कलंक मानते है कि वह काष्ठासंघ के थे और स्त्रीमुक्ति निषेध बातें जो विद्यासागर जी ने बताई है।

नंदिसंघ के साथ सम्बन्ध

अमृतचन्द्र जी के मौलिक ग्रन्थ पुरूषार्थसिद्धयुपाय से यह विदित होता है कि अमृतचन्द्र जी 962 विक्रम सम्वत् में जीवित

थे और यही बात पट्टावलियों तथा पश्चात्य विद्धानों की रिपोर्टो से प्रमाणित होती है। इस बात की पुष्टि है कि आचार्य कुन्दकुन्द, नन्दिसंघ की पट्टावलियों में शामिल थे। उसी संघ में शिष्य (आचार्य अमृतचन्द्र) हुये होंगे।[11] एक बात और नन्दिसंघ के आचार्यो के नाम के अन्त में नन्दि, चन्द्र कीर्ति तथा भूषण शब्द आते हैं। एक स्थान पर तो अमृतचन्द्र का नन्दिसंघ का होना साध्क प्रतीक है। सबसे प्रमुख प्रमाण तो यहाँ है कि कुन्दकुन्द जी नन्दिसंघ के थे।[12] अतः अमृतचन्द्र जी, कुन्दकुन्द के शिष्य तथा अनन्य भक्त थे अतः यहाँ स्वाभाविक है कि अमृतचन्द्र जी नंदिसंघ के ही होंगे। एक बात और कि नन्दिसंघ मूलसंघ का एक प्रसिद्ध / प्रचलित संघ है। श्वेताम्बराचार्य मेघविजगणि ने अमृतचन्द्र जी को मूलसंघ का अनुयायी बताया है। इस आधार पर पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री ने आचार्य अमृतचन्द्र को काष्ठसंघी आचार्यकृत 'ढाढसी गाथाओं' का कर्ता मानने का खण्डन किया है।[13] वस्तुतः अधिकांश ग्रन्थकारों ने उन्हें मूलसंघी आचार्य होने की पुष्टि की है। अतः निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं आचार्य अमृतचन्द्र जी मूलसंघ की नन्दिसंघी परम्परा के आचार्य थे।

सहायक आचार्य
एस.एस. जैन सुबोध पी.जी. कॉलेज

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. समयसार कलश–सम्पादन पं. फूलचन्दजी, पृ. 278
2. पंचस्तिकाय समय व्यवस्था टीका, पृ. 255
3. पं. आशाधर कृत– अनगार धर्मामृत भव्य कुमुदचन्द्रिका टीका, पृ. 160, 588
4. शुभचन्द्र– परमाध्यात्मतरंगिणी मंगलचारण पद्य 2
5. पण्डित वृन्दावनदास– अनुवाद परमागम, पद्य 9, पृ. 238
6. डॉ. उत्तमचन्द्र जैन– आचार्य अमृतचन्द्र : व्यक्तित्व एवं कृतितव, पृ. 61
7. पं. आशाधर जी – अनगार धर्मामृत की, पृ. 588 सम्पा. कैलाशचन्द्र शास्त्री
8. प्रो. ए. चक्रवर्ती – समयमार (अंग्रेजी प्रस्तावना), पृ. 160–61
9. डॉ. विद्याधर जोहरापुरकर – जैन शिलालेख संग्रह, भाग 5, पृ. 46 लेख 98
10. Pooranchand Nahar and Krishanachand – An Epitome of Jainisam, (See Appendix E)
11. पं. नाथूराम प्रेमी – (अनु.) पुरूषार्थ सिद्धयुपाय, प्रस्तावना, पृ. 4
12. जिनेन्द्रवर्णी – जैनेन्द्र सिद्धान्तकोष, भाग 1, पृ. 343
13. जैन साहित्य का इतिहास, भाग 2, पृ. 174